बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 172

मानक की समस्या

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने बुधवार को सभी बैंकों के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वे खुदरा ग्राहकों और सूक्ष्म, लघु एवं मझोले उपक्रमों (एमएसएमई) के लिए फ्लोटिंग दर वाले ऋण को 1 अक्टूबर से बाहरी मानक से जोड़ें। यह मानक नीतिगत रीपो दर, तीन और छह महीने के ट्रेजरी बिल का प्रतिफल अथवा फाइनैंशियल बेंचमार्क इंडिया प्राइवेट लिमिटेड (एफबीआईएल) द्वारा जारी कोई भी अन्य मानक दर हो सकती है। फ्लोटिंग दर वाले कर्जदार जो बिना पुनर्भुगतान शुल्क के पहले भुगतान करने के योग्य हैं वे भी चाहें तो बाहरी मानक का रुख कर सकते हैं। स्पष्ट है कि यह कदम मौद्रिक नीति का बेहतर पारेषण सुनिश्चित करने से संबंधित है। सैद्धांतिक तौर पर देखा जाए तो आरबीआई के निर्देश के बाद पारेषण बेहतर होना चाहिए क्योंकि बैंकों को कम से कम तीन महीने में एक बार दरों को नए सिरे से तय करना होगा।

बहरहाल, इस कदम के कुछ अनचाहे परिणाम भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए संभव है यह तात्कालिक तौर पर कर्जदारों के लिए बड़ी राहत लेकर न आए। ऐसा इसलिए क्योंकि बैंकों को मानक दर के ऊपर शुल्क लेने की इजाजत है तो वे चाहेंगे कि वे अपने तमाम जोखिम तथा उधारी से जुड़ी समस्त लागत बचा लें। अगर उक्त शुल्क ज्यादा है तो मानक दर में बदलाव परिलक्षित होगा लेकिन ऋण दरें काफी ऊंचे स्तर पर बनी रह सकती हैं। निश्चित तौर पर धीमे पारेषण का मुद्दा नया नहीं है। सन 2003 में व्यवस्था को प्राथमिक ऋण दर (सन 1994 में लागू) से हटाया गया और इसे मानक प्राथमिक ऋण दर पर स्थानांतरित किया गया। सन 2010 में आधार दर व्यवस्था लाई गई और सन 2016 में मार्जिनल कॉस्ट ऑफ फंड्स आधारित ऋण दर तय की गई। चूंकि आंतरिक मानकों ने पारेषण सुधार में वांछित मदद नहीं की इसलिए अब आरबीआई ने बाहरी मानकों का रुख किया है।

बहरहाल, मौजूदा संदर्भ में यह समझना आवश्यक है कि पारेषण कमजोर क्यों है। भारतीय बैंकिंग तंत्र फंसे हुए कर्ज के बढ़े स्तर से त्रस्त है और वह मार्जिन बचाए रखने का जतन कर रहा है। एक प्रतिस्पर्धी माहौल में फंड की लागत कम होने पर बैंकों को दरें कम करनी चाहिए ताकि और कर्जदार आकर्षित हों और उनकी बैलेंस शीट का विस्तार हो। ऐसा नहीं है कि बैंक उच्च ब्याज दर लेकर कोई बहुत अधिक मुनाफा कमा रहे हैं। खराब पारेषण हमारे तंत्र की अक्षमता को उजागर करता है। उच्च राजकोषीय घाटा और सरकार की बड़ी उधारी भी नीतिगत दरों के पारेषण को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए केंद्रीय बैंक ने गत वित्त वर्ष में करीब 3 लाख करोड़ रुपये की नकदी डाली ताकि तंत्र में पैसा बना रहे।

अब जबकि नियामक ने बाहरी मानक लागू किया है तो बैंकिंग क्षेत्र पर अतिरिक्त दबाव पड़ सकता है। संभव है कि बैंकों को भी अपनी जमा दर को बाहरी मानक दर से जोड़ना पड़े ताकि उनका ब्याज मार्जिन बच सके। यह स्पष्ट नहीं है कि भारतीय जमाकर्ता हर तीन महीने पर जमा दर तय करने पर कैसी प्रतिक्रिया देंगे? बाहरी मानक दर के कारण उपभोक्ताओं और बैंक दोनों का ब्याज जोखिम बढ़ेगा। बैंक हेजिंग की दृष्टि से बेहतर स्थिति में होंगे, वहीं जोखिम से बचने वाले खुदरा जमाकर्ता अन्य रास्ते तलाश सकते हैं। ऐसे में अल्प बचत योजनाएं शायद बैंकों को जमा दर तय करने के मामले में राहत न दें। परिणामस्वरूप मार्जिन पर दबाव बन सकता है और चूंकि बैंकिंग क्षेत्र का बड़ा हिस्सा सरकारी है इसलिए इसके राजकोषीय प्रभाव भी होंगे। इन अनचाहे प्रभावों के बारे में विचार किया गया होगा। बेहतर विकल्प यही होता कि बैंकों की बाहरी मानक दर तक मुक्त पहुंच होती। इससे उन्हें बेहतर समायोजन करने को मिलता।

अजय मोहंती

बैंकों का विलय 'बिग बैंग' सुधार नहीं

सरकार ने 10 सार्वजनिक बैंकों के विलय की घोषणा कर बैंकिंग क्षेत्र को सशक्त बनाने की कोशिश है। लेकिन व्यापक बैंकिंग सुधार के लिए यह काफी नहीं है। बता रहे हैं **देवाशिष बसु**

वित्तीय बाजार अक्सर 'बिग बैंग' सुधारों का जिक्र करते हुए भारत सरकार से अपेक्षित कदम उठाने की मांग करते रहते हैं। इस शब्दावली की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है लेकिन अश्लीलता के मामले में अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश पॉटर स्टीवर्ट के विचारों से इसे समझ सकते हैं। न्यायाधीश स्टीवर्ट ने कहा था, 'जब मैं इसे देखता हूं तभी मैं इसे जान पाता हूं।' हाल में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने कुछ सार्वजनिक बैंकों के विलय की घोषणा की तो कई को लगा कि बिग बैंग सुधार कैसे होते हैं? कुछ लोगों ने तो उत्साह में 1991 के दौर को याद करना शुरू कर दिया। क्या वाकई में ऐसा है? बिग बैंग सुधारों को दोतरफा परखना होता है: तात्कालिक रूप से बेहद सकारात्मक असर डालने के साथ ही यह अचल भी हो। वर्ष 1991 में सरकार बनाने के कुछ महीने बाद ही पी वी नरसिंह राव ने एकाधिकार एवं प्रतिबंधात्मक व्यापार कार्य अधिनियम जैसे बेवकूफाना कानून को खत्म कर दिया था। लगभग हर चीज की किल्लत वाले दौर में वह कानून उत्पादन की राह में केवल अड़चनें पैदा करता था। इस लिहाज से उस कानून का खात्मा एक बिग बैंग सुधार था क्योंकि उसने दशकों से बोतल में बंद उद्यमशीलता के जिन्न को आजाद कर दिया था। मैं आश्वस्त हूं कि इन बैंकों के विलय में भी कुछ फायदे निहित होंगे लेकिन कमजोर सार्वजनिक बैंकों के समूह का विलय कर उन्हें बड़ा बनाने का कदम बिग बैंग सुधारों की परीक्षा में नाकाम हो जाता है। बैंक ऑफ इंडिया के सेवानिवृत्त चेयरमैन एम जी भिड़े का कहना है कि इस विलय से बैंकों की लागत घटेगी और उनके पास तकनीक में निवेश के लिए पैसा मौजूद होगा। इसके अलावा कम बैंक होने से उनमें राजनीतिक नियुक्तियां होने की आशंका भी कम हो जाएगी। हालांकि एक अन्य सार्वजनिक बैंक के पूर्व चेयरमैन की राय इसके उलट है। वह कहते हैं, 'अगर आप छोटी गड़बड़ियों को एक साथ ला देते हैं तो फिर आपको एक बड़ी गड़बड़ी ही मिलेगी।'

खराब ट्रैक रिकॉर्ड

हमें इंतजार कर यह देखना होगा कि आगे क्या होता है? हालांकि इस सरकार के ट्रैक रिकॉर्ड से बचा नहीं जा सकता है। इसने हमें तमाम कारण दिए हैं कि सार्वजनिक बैंकों के विलय से जुड़े प्रयोग को लेकर भी हम आशंकित बने रहें। सरकार आरोही सुधारों के जरिये चार वर्षों से सार्वजनिक बैंकों की समस्या दूर करने की जद्दोजहद करती रही है। लेकिन जमीनी स्तर पर नाममात्र की प्रगति हुई और इसके तमाम सबूत हैं कि नेता हकीकत को समझते नहीं हैं। वे अपनी ही दुनिया में मगन रहते हैं।

ज्ञान संगम: जनवरी 2015 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बैंकिंग सुधारों की एक कार्य योजना बनाने के लिए सार्वजनिक बैंकों के प्रमुखों के साथ बैठक की थी। इस उच्चस्तरीय बैठक को ज्ञान संगम का नाम दिया गया था जिसमें वित्त मंत्री, आरबीआई गवर्नर, वित्त राज्यमंत्री जयंत सिन्हा और वित्त मंत्रालय के सचिवों ने भी शिरकत की थी। प्रधानमंत्री बैंकिंग क्षेत्र में हुई गलतियों पर एक व्यापक सहमति बनाकर इस बात की रूपरेखा बनाना चाहते थे कि सार्वजनिक बैंकों की स्थिति सुधारने और उसे सशक्त करने के लिए बैंकों के साथ सरकार को भी क्या कदम उठाने चाहिए? आधिकारिक विज्ञप्ति के मुताबिक प्रधानमंत्री एक सुधारात्मक कार्य योजना की रूपरेखा तय किए जाने के पक्ष में था। मैंने उस बैठक के ठीक पहले दिसंबर 2014 में लिखा था कि सार्वजनिक बैंकों को बेसल-3 मानकों पर खरा उतरने के लिए वर्ष 2018 तक 2.4 लाख करोड़ रुपये की इक्विटी पूंजी की जरूरत पड़ेगी। अगर इस बैठक में मुश्किल सवाल नहीं उठाए जाते हैं तो ज्ञान संगम केवल किनारे पर ही रह जाएगा और सार्वजनिक बैंकों की हालत पहले जैसी ही बनी रहेगी। लेकिन कुछ नहीं हुआ। उसके एक साल बाद भी ज्ञान संगम की एक और बैठक हुई और उसे भी भुला दिया गया। हालत यह है कि पांच साल बाद सार्वजनिक बैंकों की हालत और खराब हो चुकी है।

इंद्रधनुष: इस सात सूत्री योजना की घोषणा अगस्त 2015 में की गई थी। इसने वरिष्ठ पदों पर बेहतर नियुक्तियां करने, बैंक बोर्ड ब्यूरो (बीबीबी) के गठन, अधिक पूंजी डालने, फंसे कर्जों की मात्रा कम करने, बैंक प्रबंधन को मजबूत बनाने, जवाबदेही और प्रशासन को बेहतर बनाने का वादा किया था। लेकिन यह योजना भी फ्लॉप शो ही साबित हुई। पहले तीन कामों को करना आसान था, लिहाजा बीबीबी का गठन कर दिया गया लेकिन उसे भी काफी हद तक नजरअंदाज ही किया जाता रहा। बैंकों के पुनर्पूंजीकरण का ऐलान 2018 के आखिर में किया गया और अब भी यह टुकड़ों-टुकड़ों में अंजाम दिया जा रहा है।

बैंकिंग की राजनीति

क्या सार्वजनिक बैंकों का सुधार वास्तव में एक आर्थिक उद्देश्य है? मेरा मत है कि हमें इस सरकार के लक्ष्यों एवं योजनाओं के बारे में बहुत कम जानकारी होती है। हमें कहे गए शब्दों के मायने समझने के साथ ही गतिविधियों पर नजर रखनी होती है। ज्ञान संगम बैठक में मोदी ने बैंकों से जनधन योजना का दूसरा दौर चलाने के बारे में कहा था। इसमें स्कूलों में छात्र संसद की तरह प्रतिस्पर्द्धाओं के जरिये वित्तीय साक्षरता बढ़ाने की पहल करनी थी। उन्होंने बैंकों को सॉफ्टवेयर एवं विज्ञापन में साझा ताकत विकसित करने, प्रति बैंक 20,000-25,000 स्वच्छता उद्यमी तैयार करने, छात्रों को कर्ज बांटने और सुस्त बैंकिंग से परहेज करने का भी निर्देश दिया था। प्रधानमंत्री ने बैंकरों से कहा था कि कॉर्पोरेट सामाजिक दायित्व (सीएसआर) के हिस्से के तौर पर उन्हें हर साल एक क्षेत्र को चुनकर उसमें सकारात्मक भूमिका निभानी चाहिए। भयानक संकट से गुजर रहे सार्वजनिक बैंकों के लिए इस तरह का एजेंडा तय करना काफी विचलित करने वाला है।

तत्कालीन वित्त राज्य मंत्री जयंत सिन्हा ने 2015 की शुरुआत में कहा था, 'अगर हम सार्वजनिक बैंकों में अपनी हिस्सेदारी कम करते हैं तो हम संकटग्रस्त मूल्यांकन पर ऐसा करेंगे। हमें इन बैंकों का प्राइस-टु-बुक दायरा बढ़ाने की जरूरत है और उन्हें निजी क्षेत्र के बैंकों की बराबरी पर लाने की जरूरत है। यह सुनिश्चित करना हमारी जिम्मेदारी है कि अगर हम अपनी हिस्सेदारी बेचने जा रहे हैं तो हमें यह काम समुचित मूल्यांकन पर अंजाम देना होगा क्योंकि यह हिस्सेदारी भारत के लोगों की है।' उसके बाद से धांधली एवं बट्टे खाते में डाले जाने से बैंकों का मूल्यांकन लगातार कम होता गया है। मैं पहले भी कह चुका हूं कि नेता अपनी अलग दुनिया में ही रहते हैं।

दिवंगत अरुण जेटली ने बिग बैंग सुधारों को लेकर दीवानगी होने पर सवाल उठाते हुए कहा था, 'हम छोटे-छोटे क्रमिक सुधारों से भी बहुत कुछ हासिल कर सकते हैं।' यह बात तभी सही है जब छोटे बदलावों को अहम सुधारों से बचने का बहाना न बनाया जाए।

क्या सार्वजनिक बैंकों का क्रमिक विलय इन बैंकों के कामकाज पर असर डालने वाले मूल मुद्दों- भ्रष्टाचार और प्रोत्साहन की कमी का हल निकालेगा? क्या वे इस बात का ध्यान रखेंगे कि पूंजी एवं प्रबंधन की हालत सुधरने पर भी कर्जदार सार्वजनिक बैंकों पर अब अधिक निर्भर नहीं रह गए हैं? कमजोर बैंक विलय से आने वाले समय में पूंजी, प्रतिस्पर्द्धा और तकनीक की चुनौतियां दूर नहीं होंगी। लेकिन वह एक अलग कहानी है।

उर्वरकों और मृदा स्वास्थ्य पर सरकार का रवैया विरोधाभासी

खेती-बाड़ी

सुरिंदर सूद

एक ओर सरकार रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल कम करने की सलाह देती है, वहीं दूसरी तरफ इनकी खपत बढ़ाने के लिए इन पर भारी सब्सिडी (यूरिया के मामले में 70 प्रतिशत तक) देती है

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस साल अपने स्वतंत्रता दिवस भाषण में देश के किसानों से मृदा स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए किसानों से रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल रोकने या इसकी मात्रा कम करने का आह्वान किया है। प्रधानमंत्री मोदी के इस आह्वान के कृषि क्षेत्र के लिए खास मायने हैं, इसलिए इसका सतर्कता से विश्लेषण किया जाना चाहिए। इसमें कोई शक नहीं है कि रासायनिक प्रदूषण से मृदा स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान को लेकर प्रधानमंत्री की चिंता जायज है, लेकिन उनके द्वारा सुझाया गया समाधान मृदा स्वास्थ्य के संरक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है। भूमि क्षरण और इसकी उर्वर शक्ति कमजोर करने के लिए केवल रासायनिक उर्वरक ही जिम्मेदार नहीं हैं। केवल इनका इस्तेमाल रोकने या इसमें कमी करने से समस्या का समाधान नहीं दिख रहा है।

भूमि संसाधनों की हालत बिगाड़ने के लिए कई रासायनिक, भौतिक और जैविक कारक जिम्मेदार हैं। मई 2018 में मृदा स्वास्थ्य पर राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी (एनएएएस) की 'संक्षिप्त नीति' में इन कारकों पर चर्चा की गई है।

एनएएएस ने इसके लिए अनुपयुक्त जोत, अकुशल कृषि योग्य भूमि एवं जल प्रबंधन, मृदा क्षरण, जल जमाव, लवणता एवं क्षार की उपस्थिति, उर्वरकों का असंतुलित इस्तेमाल, मिट्टी की उर्वरा शक्ति में कमी और सबसे अहम जैविक खाद के इस्तेमाल को नजरअंदाज करने जैसे कारकों को जिम्मेदार बताया है।

हरित क्रांति से पहले रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल नहीं के बराबर होता था। हालांकि उस समय उत्पादन भी कम था और बढ़ती आबादी का पेट भरने के लिए यह अपर्याप्त साबित हो रहा था। खाद्यान्न की कमी के मद्देनजर उर्वरकों के प्रति संवेदनशील ऊंची उपज देने वाली फसल किस्मों की पैदावार पर जोर दिया गया। यह पहल हरित क्रांति का जनक बनी और देश ज्यादातर खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बन पाया। ऐसी ऊंची पैदावार देने वाली किस्मों के लिए अधिक मात्रा में मृदा पोषक तत्त्वों की जरूरत होती है, जिनकी आपूर्ति सामान्य जैविक खादों से नहीं की जा सकती है। वैसे ये जैविक खाद सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की आपूर्ति में सहायक होते हैं, जो आम तौर पर रासायनिक उर्वरक नहीं कर पाते हैं। कृषि विशेषज्ञ कुल मिलाकर बेहतर परिणामों के लिए रासायनिक और जैविक खाद के मिले-जुले इस्तेमाल की सलाह देते हैं। अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि सही मात्रा में सही समय पर और सही जगह पर रासायनिक उर्वरकों के साथ जैविक खाद के इस्तेमाल से मिट्टी की उत्पादकता बढ़ती है, न कि इसका ह्रास होता है।

यह बात भी सही है कि उर्वरकों एवं मृदा स्वास्थ्य को लेकर सरकार का रवैया विरोधाभासी है। एक ओर सरकार रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल कम करने की सलाह देती है, वहीं दूसरी तरफ इनकी खपत बढ़ाने के लिए इन पर भारी सब्सिडी (यूरिया के मामले में 70 प्रतिशत तक) देती है। सब्सिडी के साथ भी कुछ चिंताए हैं। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों के लिए यह न तो व्यावहारिक है और न एकसमान है। इसका नतीजा यह होता है कि उर्वरकों के असंतुलित इस्तेमाल से मृदा स्वास्थ्य को हानि पहुंचती है। इतना ही नहीं, फॉस्फेट, पोटाश और मिश्रित उर्वरक पोषक तत्त्व आधारित सब्सिडी (एनबीएस) योजना के तहत लाए गए हैं, लेकिन सर्वाधिक इस्तेमाल होने वाला उर्वरक यूरिया इसकी जद में नहीं आता है। यूरिया की कीमत भी काफी कम रखी गई है, जो समझ से परे है। सब्सिडी को व्यावहारिक बनाना और यूरिया का विनियंत्रण कर इसे एनबीएस के तहत लाना पोषक तत्त्वों के संतुलित इस्तेमाल के लिए महत्त्वपूर्ण है।

वास्तव में उर्वरकों का अंधाधुंध इस्तेमाल रोकना और जरूरत भर इस्तेमाल को आगे बढ़ाने की जरूरत है। यह सुनिश्चित करने के लिए कुछ कदम उठाए भी गए हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रणाली और यूरिया की अनिवार्य नीम-कोटिंग ऐसे ही कुछ कदम हैं। अब अगले चरण में उत्पादन को प्रोत्साहन देने और रासायनिक उर्वरकों की तरह ही जैविक खाद और जैव-उर्वरकों के लिए वित्तीय रियायत देने की जरूरत है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने हाल में ही एक लिक्विड बायो-एनपीके फॉर्मूला तैयार किया है, जो मृदा को नुकसान पहुंचाए बिना तीनों मुख्य पोषक तत्त्वों (नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश) की उपलब्धता बढ़ा सकता है।

इस तरल फॉर्मूले में तीन तरह के अलग-अलग, लेकिन साथ-साथ काम करने वाले सूक्ष्मजीवी होते हैं। इनमें एजोटोबैक्टर क्रूकोकम वातावरण में मौजूद नाइट्रोजन मृदा में अवशोषित होने में मदद करते हैं, जबकि बाकी दो पेनीबेसिलस टाइलोपी और बेसिलस डिकोलोरेटिओनिस क्रमश: फॉस्फेट और पोटाश को अधिक विलयशील बना कर काफी कम कीमतों पर पौधों के लिए इनकी उपलब्धता सुनिश्चित करते हैं। ऐसे उपायों से प्रधानमंत्री का आह्वान फलीभूत हो सकता है, साथ ही इनसे कृषि उत्पादन पर भी कोई नकारात्मक असर नहीं होगा।

कानाफूसी

विभाग से घटकर इकाई!

कांग्रेस अध्यक्ष सोनिया गांधी ने पार्टी के डेटा एनालिटिक्स विभाग को पुनर्गठित किया है। प्रवीण चक्रवर्ती की अध्यक्षता वाले इस विभाग ने वर्ष 2019 के लोकसभा चुनाव के दौरान कांग्रेस के न्यूनतम आय गारंटी के वादे से जुड़े अभियान का नेतृत्व किया था। इसके अलावा उसने पार्टी के सदस्यता अभियान का भी संचालन किया था। परंतु लोकसभा चुनाव में पार्टी को 120 से अधिक सीटें मिलने का इसका पूर्वानुमान बुरी तरह गलत साबित हुआ था। ऐसे में पार्टी के भीतर ही चक्रवर्ती के खिलाफ कई आवाजें उठने लगी थीं। चक्रवर्ती को राहुल गांधी का करीबी माना जाता है। अब पार्टी अध्यक्ष सोनिया गांधी ने इसे एक विभाग से घटाकर एक विभाग के अधीन एक इकाई का दर्जा दे दिया है। पिछले दिनों पार्टी के महासचिव के सी वेणुगोपाल ने एक पत्र लिखकर कहा कि यह विभाग अब संगठन विभाग के अधीन तकनीक और डेटा इकाई के रूप में काम करेगा। चक्रवर्ती इस इकाई के अध्यक्ष बने रहेंगे लेकिन अब उन्हें पार्टी अध्यक्ष के बजाय संगठन विभाग के अध्यक्षों से विभिन्न प्रकार की मंजूरियां लेनी पड़ेंगी।

आपका पक्ष

आर्थिक मोर्चे पर विफल सरकार

देश की अर्थव्यवस्था मंदी के दौर से गुजर रही है। आर्थिक मोर्चे पर असफल होने के कारण केंद्र सरकार की चौतरफा आलोचना हो रही है। मतदाताओं ने केंद्र की भाजपा सरकार को काफी उम्मीदों के साथ दूसरी बार भारी बहुमत से विजय दिलाई थी। आर्थिक सुस्ती के चलते जीडीपी 5.8 प्रतिशत से फिसलकर 5 फीसदी रह गया है। विनिर्माण क्षेत्र मात्र 0.5 फीसदी तथा कृषि क्षेत्र 2 फीसदी से बढ़ रहा है। भारी मात्रा में कर्ज डूबने की वजह से देश के सार्वजनिक बैंक घाटे में हैं। उत्पादित वस्तुओं की मांग की कमी के कारण कंपनियों को अपने कर्मचारियों की छंटनी करनी पड़ रही है। सरकार भी इस अप्रत्याशित मंदी से अनिभिज्ञ थी तथा इससे निपटने के लिए तैयार नहीं थी। अचानक आई इस मंदी से उबरने के लिए कई फैसले किए जा रहे हैं। ये फैसले कितने असरदार होंगे यह भविष्य में पता चलेगा। अर्थशास्त्रियों एवं विशेषज्ञों के मुताबिक यह मंदी अचानक नहीं आई है बल्कि सरकार द्वारा पिछले वर्षों में लिए गए गलत आर्थिक निर्णय के कारण आई है। जीएसटी आम व्यापारियों के लिए काफी जटिल साबित हुई तथा इसका क्रियान्वयन उचित ढंग से नहीं किया गया। इससे व्यापारी हतोत्साहित हुए। नोटबंदी की वजह से अर्थव्यवस्था 2 फीसदी नीचे आ

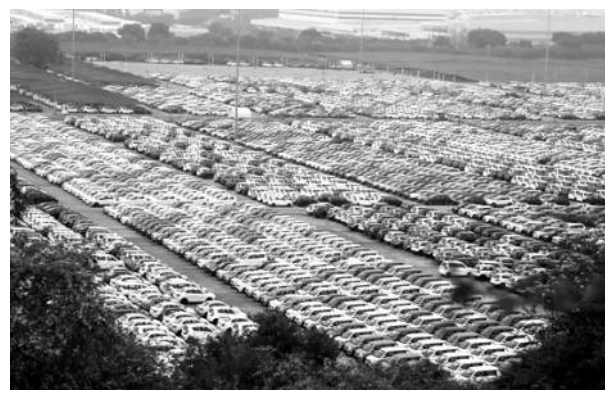

देश में मंदी का असर वाहन उद्योग पर पड़ा है जिससे वाहन बिक्री में कमी आई है *-पीटीआई*

गई और कई छोटे-बड़े उद्योग डूब गए। सरकार किसानों के लिए कई योजनाएं लाई लेकिन वे किसानों तक नहीं पहुंच पाई। इससे किसान हतोत्साहित हैं। किसानों को अभी भी उनकी उपज का उचित दाम नहीं मिल रहा है। इसलिए कई किसान कृषि छोड़ कर रोजगार की तलाश में शहर पलायन कर रहे हैं। अत: सरकार को पिछली गलतियों से सबक लेकर अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए योग्य अर्थशास्त्रियों एवं विशेषज्ञों की नियुक्ति करनी चाहिए।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

डिजिटल युग में स्मार्ट क्लास की जरूरत

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) की वेबसाइट में कक्षा 1 से 12 तक की किताबें पीडीएफ फाइल में मौजूद हैं। इसके अलावा वेबसाइट में ई किताबें भी हैं। पीडीएफ फाइल पर उपलब्ध किताबें मोबाइल, टैबलेट, कंप्यूटर आदि में पढ़ी जा सकती हैं। सरकार ने आकाश टैबलेट का वितरण भी किया था। शिक्षा व्यवस्था में सुधार तथा आधुनिकीकरण के लिए सरकार जोर भी दे रही है। ऐसे में अगर कक्षा 1 से बच्चों को टैबलेट पर पढ़ाया जाए तो कागज के साथ-साथ अन्य चीजों की भी बचत होगी। एक स्मार्ट क्लास बन जाने से बच्चों को पढ़ाई में मन लगेगा तथा वे अधिक ज्ञान अर्जन कर सकेंगे। आजकल छोटे बच्चे आसानी से मोबाइल चलाना सीख जाते हैं। ऐसे में अगर उन्हें टैबलेट दिया जाए तो वह उसे भी चलाना सीख जाएंगे। लिखने के लिए वॉयस टाइपिंग का सहारा लिया जा सकता है। ऐसे में बच्चों की पूरी पढ़ाई टैबलेट पर हो सकती है। अगर इस तरह से पढ़ाई होने लगी तो बच्चों का मानसिक विकास और बेहतर होगा। बच्चों को भारी बस्ते से भी निजात मिल जाएगी। बच्चे टैबलेट में खेल-खेल में कई चीजें सीख सकेंगे। यही बच्चे बड़े होकर अच्छी तरह से टैबलेट का इस्तेमाल करने लगेंगे। इस प्रकार की पढ़ाई पर विचार करने की जरूरत है।

संदीप शर्मा, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।